खण्ड –4, अंक – 1, वर्ष – 2016, मु0पृ0 15–18, D.O.I. :10.22445/avsp.v4i1.4369 शोध पत्र

दक्षिणी राजस्थान में बाघों की उपस्थिति–कुछ प्रमाण

सतीश कुमार शर्मा
सहायक वन संरक्षक, वन्यजीव अभयारण्य, जयसमन्द,
जयसमन्द पोस्ट, जिला उदयपुर–313905, राजस्थान, भारत
sksharma56@gmail.com

प्राप्त तिथि– 05.07.2016; स्वीकृत तिथि– 19.08.2016

सार

दक्षिणी राजस्थान के उदयपुर, भीलवाड़ा, राजसमन्द, एवं चित्तौड़गढ़ जिले के विस्तृत क्षेत्र में वर्ष 1902 से 1956 तक बाघों की उल्लेखनीय उपस्थिति थी। तत्कालीन समय वन्य आवास में उनकी संख्या भी अधिक थी। तदुपरांत बढते मानव हस्तक्षेप से उत्पन्न जैविक दबाव के कारण संभवतः यह प्रजाति 1970 से 1980 के मध्य विलुप्त हुई।

बीज शब्द– दक्षिणी राजस्थान, बाघ, प्रमाण।

Presence of tigers in southern Rajasthan-some evidences

Satish Kumar Sharma
Assistant Conservator of Forests, Wildlife Sanctuary, Jaisamand
Post-Jaisamand, District- Udaipur – 313905, Rajasthan, India
sksharma56@gmail.com

Abstract

Tigers were widely present from 1902 to 1956 in Udaipur, Rajasmand, Bhilwara and Chittorgarh districts of southern Rajasthan. During erstwhile time, their number was also good in the wild, but later on, due to increasing anthropogenic pressure tiger became extinct from southern Rajasthan, probably between 1970 to 1980.

Key words- Southern Rajasthan, tiger, evidence.

1. प्रस्तावना– बाघ, सिंह, चीता, तेंदुआ एवं हिम तेंदुआ भारत की महत्वपूर्ण पाँच बड़ी बिल्लियाँ हैं।[1,3,5] राजस्थान में बडी बिल्लियों में केवल बाघ(*Panthera tigris*) तथा तेंदुआ(*Panthera pardus*) वर्तमान में अस्तित्व में हैं।[8] राजस्थान का दक्षिणी भू–भाग ''मेवाड़'' के नाम से विख्यात है। दक्षिण राजस्थान में मुख्यतया उदयपुर, राजसमन्द, प्रतापगढ़, बांसवाड़ा, डूंगरपुर, भीलवाड़ा एवं चित्तौड़गढ़ जिलों के क्षेत्र आते हैं। प्रतापगढ़ कुछ वर्षों पूर्व चित्तौड़गढ़ जिले का एवं राजसमन्द उदयपुर जिले का ही भाग था। एक समय था जब दक्षिण राजस्थान में जगह–जगह बाघ निवास करते थे लेकिन आज दक्षिण राजस्थान में बाघ का विलुप्तिकरण हो चुका है। दक्षिण राजस्थान से बाघ 1970 से 1980 के मध्य के दशक में विलुप्त हुआ।[7, 8, 9] उदयपुर शहर से मात्र 50 किमी दूर जयसमन्द क्षेत्र बाघों की महत्वपूर्ण शरणस्थली थी जहाँ मेवाड़ के महाराणा उनका शिकार करते थे लेकिन यहाँ अब बाघ नहीं बचे।[4] कभी मेवाड़ के महाराणा चीता(*Actinonyx jubatus*) भी पालते थे जिनका उपयोग हिरणों के शिकार में किया जाता था। चीता मेवाड़ में हुरड़ा, भीलवाड़ा एवं चित्तौड़गढ़ में मिलते थे जो कालान्तर में समाप्त होते गये।[6] बाघ का राजस्थान के भिन्न–भिन्न क्षेत्रों से विलुप्तिकरण एक अध्ययन का विषय है। सूक्ष्म स्तर पर यह जानना जरूरी है कि वे कौन सी परिस्थितियाँ थी जिनके कारण बाघ समाप्त हुआ। संभागवार बाघ के विलुप्त होने की कालावधि का भी प्रमाणित दस्तावेजीकरण उपलब्ध नहीं है। हाल ही में टॉड़गढ़–रावली, बूंदी, फुलवारी अभयारण्य एवं दक्षिण राजस्थान के कतिपय क्षेत्रों के लिए इस तरह का अध्ययन हुआ है।[7–10] प्रस्तुत पत्र में राजस्थान में, विशेषकर दक्षिणी राजस्थान में बाघ के अतीत को जानने की अगली श्रंखला में एक और प्रयास किया गया है। तंवर[4] ने मेवाड़ संभाग में आजादी से एकदम पहले एवं तुरन्त बाद में मेवाड़ के महाराणाओं के शिकार वृतान्तों का ब्यौरा दिया है जो बाघ की उपस्थिति के स्थल व कालावधि जानने में मदद करते हैं।

2. **अध्ययन क्षेत्र एवं अध्ययन काल–** बाघों के राजस्थान में, खास कर दक्षिण राजस्थान, में वितरण को जानने के लिए यह अध्ययन उदयपुर, राजसमन्द, प्रतापगढ़, बांसवाड़ा, डूंगरपुर, भीलवाड़ा एवं चित्तौड़गढ़ जिलों में 1986 से 2015 तक किया गया।

3. **अध्ययन विधि–** विभिन्न उपलब्ध साहित्य का अध्ययन किया गया। बाघों की जानकारी रखने वाले ठिकानेदार, ओहदेदार एवं पुराने शिकारियों से सूचनाऐं प्राप्त की गयी। तत्कालीन शासकों की निजी शिकारगाहों एवं उनमें निर्मित औदियों व अन्य निर्माणों का अवलोकन किया गया। स्थानीय जनता से भी शिकारगाहों, औदियों एवं शिकार प्रकरण संबंधी जानकारियाँ प्राप्त की गयी।

4. **परिणाम एवं विवेचन–** दक्षिणी राजस्थान के संदर्भ में वन्यप्राणियों, खासकर बाघ के वितरण के लिए श्यामलदास[6], तंवर[4], शर्मा[7–9] आदि महत्वपूर्ण दस्तावेज हैं। तंवर[4] ने अपनी कृति आजादी मिलने के लगभग 9 वर्ष बाद एवं वन्यजीव(सुरक्षा) अधिनियम 1972 के अस्तित्व में आने से 16 वर्ष पूर्व प्रकाशित की थी। यह समय वन्यजीवों की उपलब्धता की दृष्टि से अपेक्षाकृत अच्छा समय था साथ ही ''अवैध शिकार'' एवं ''परमिट शिकार'' का बोलबाला भी था।[9–10] तत्कालीन समय में दक्षिण राजस्थान में बाघ की स्थिति को दर्शाने हेतु तंवर[4] की कृति अत्यन्त महत्वपूर्ण है। वे स्वयं भी बहुत अच्छे शिकारी एवं शिकार प्रबंधक रहे हैं। उन्होंने कालावधि को बताने में संवत् या ईसवीं सन् दोनों का उपयोग किया है। प्रस्तुत पत्र में संवत् को सन् में परिवर्तित कर प्रस्तुत किया गया है। उक्त कृति में 1902 से 1956 तक दक्षिण राजस्थान में बाघों की उपस्थिति के स्थलों का विवरण उपलब्ध है जो निम्न है–

सारणी 1– दक्षिणी राजस्थान में सन् 1902 से 1956 तक बाघों की उपस्थिति के कुछ क्षेत्र

क्र0स0	जिला	वर्ष (AD)	स्थान जहाँ बाघ प्रजाति विद्यमान थी
1	उदयपुर	1902	भोमट का मरवड़ मगरा
		1926	केवड़ा गांव के जंगल
		1926	जयसमन्द
		1937	कानोड़
		1938	जयसमन्द
		1939	बाघदड़ा
		1940	कमलनाथ वन क्षेत्र
		1941	जयसमन्द
		1945	जयसमन्द
		1953	घसार
2	राजसमन्द	1944	पालर शिकरगाह (कुम्भलगढ़)
		1946	रूपनगर (कुम्भलगढ़)
3	भीलवाड़ा	1934	माँड़लगढ़
		1941	जहाजपुर, झींकली गांव, बेरीमाता
		1944	माँड़लगढ़
		1950	माँड़लगढ़
		1956	माँड़लगढ़
4	चित्तौड़गढ़	1926	दौलतपुरा गांव के पास जेला की धार
		1932	कूवाखेड़ा गांव के पास
		1934	हथणी शिकारगाह
		1941	आमझर शिकारगाह(बस्सी)
		1941	बोकड़िया शिकारगाह
		1941	धामड़मऊ (भैंसरोड़गढ़ के पास)
		1942	मेनाल
		1956	भैंसरोड़गढ़

उपरोक्त सारणी से स्पष्ट है आधी शताब्दी पूर्व बाघ दक्षिण राजस्थान से दूर–दूर तक निरन्तरता में विद्यमान थे। उदयपुर शहर के आस–पास सटी पहाड़ियों के जंगलों में बाघ की उपस्थिति दर्ज थी। बाघदड़ा के जंगल उदयपुर शहर से मात्र 20 किमी दूर हैं जहाँ बाघ विद्यमान थे। बाघों की अच्छी उपस्थिति के कारण ही क्षेत्र का नाम ''बाघदड़ा'' यानि ''बाघों का दड़ा''

यानि ''बाघों का घर'' पड़ा। आजकल इसे ''बाघदड़ा नेचर पार्क'' के नाम से जाना जाता है। यहाँ तीन शिकार औदिया इसकी गवाह हैं जिनमें जनाना औदी काफी सुरम्य है जो बाघदड़ा जलाशय से निकले नाले के किनारे पर स्थित है।[8] नाले की नमी, छाया व शीतलता बाघों को गर्मी के मौसम में सोने व आराम करने की बेहतरीन जगह थी। यहाँ ''हाका'' कर बाघ को बाहर निकाल कर शिकार किया जाता थी। तत्समय यहाँ सांभर, चिंकारा, चौसिंगा, जंगली सुअर व नील गाय की अच्छी उपस्थिति थी जो बाघ का भोजन आधार बनते थे। उदयपुर शहर से 15 किमी दूर सलूंम्बर मार्ग पर हल्दूघाटी से दक्षिण दिशा में चलने पर केवड़ा गांव का ''केवड़ा की नाल'' वनक्षेत्र बहुत सघन एवं शीतल था। कभी नमी युक्त केवड़ा की नाल(संकरी घाटी) में केवड़ा (*Pandanus fascicularis*) उगा करता था जिससे इस नाल का नामकरण भी हुआ। नाल की धारा में आधी शताब्दी पूर्व जगह–जगह गर्मी में भी जल उपलब्ध रहता था लेकिन अब गर्मी में यह धारा सूख जाती है। आज भी इस ''नाल वन'' में केवडेश्वर महादेव क्षेत्र में सालभर पानी प्रवाहमान रहता है। वहाँ एक विशाल प्राचीन बरगद भी विद्यमान है। यह शीतल एवं पानी से भरपूर क्षेत्र बाघों की अनेकों जैविक जरूरतों को पूरा करता था। इसी क्षेत्र की निरन्तरता में जयसमन्द एंव उससे आगे सलुंबर के वन क्षेत्र हैं जिनमें बाघों की अच्छी संख्या तत्समय विद्यमान थी। आजादी के बाद 1955 में राजस्थान सरकार ने जयसमन्द को अभयारण्य भी घोषित कर दिया।

उदयपुर से ईसवाल की तरफ जाने पर घसार(घसियार), झाड़ोल की तरफ जाने पर मरवड़–अलसीगढ़ मगरा(पहाड़) एवं झाड़ोल से आगे जाने पर कमलनाथ वन क्षेत्र तथा और आगे जाने पर फुलवारी की नाल वन क्षेत्र में सभी जगह बाघ का निवास था। फुलवारी की नाल वनक्षेत्र की निरन्तरता में उत्तरी गुजरात में पोलो वन क्षेत्र तक बाघ की निरन्तरता व आवाजाही थी। राजसमन्द जिले के पालर व रूपनगर वन क्षेत्रों व आस–पास के सभी जंगलों में बाघ था। आज ये क्षेत्र कुंभलगढ़ अभयारण्य के भाग हैं। कुंभलगढ़ अभयारण्य बाघों के लिए हमेशा प्रसिद्ध रहा है। कुंभलगढ़ से लेकर रावली टॉड़गढ़ एवं उत्तर दिशा में और आगे अजमेर जिले के पहाड़ों में धौक वनों(*Anogeissus pendula* Forest) में बाघ की उपलब्धता थी। यही स्थिति भीलवाड़ा जिले में भी थी। भीलवाड़ा जिले में जहाजपुर से लेकर माँडलगढ़ एवं उससे आगे मेनाल तक बाघ विद्यमान थे।

चित्तौड़गढ़ जिले में भी दूर–दूर तक बाघ विद्यमान थे। तत्कालीन आमझर शिकारगाह एवं इसके आस–पास का वनक्षेत्र आज बस्सी अभयारण्य (Bassi Wildlife Sanctuary) के नाम से जाना जाता है। इसी तरह चित्तौड़गढ़ जिले का कोटा की सीमा के पास भैसरोड़गढ़ शिकारगाह अब भैसरोड़गढ़ अभयारण्य के नाम से जाना जाता है। बस्सी से लेकर भैसरोड़गढ़, जवाहरसागर एवं दरा तक के जंगलों में बाघ था। दक्षिणी राजस्थान में बाघ का घर–घर में मुख्य प्रवेश द्वार पर चित्रांकन होता था । जब भी किसी के घर में कोई शादी–विवाह होता था, घर के द्वार पर बाघ का चिंत्राकन होता था। यह परिपाटी आज भी जारी है। इस चिंत्राकन की खास बात यह थी कि एक ऐसे बाघ का चित्रांकन होता है जिसकी पूंछ पर सिंह की पूंछ की तरह बालों का गुच्छा होता है। तत्कालीन समय में दो वन क्षेत्रों के बीच संपर्क मार्ग (Corridore) की कोई समस्या नहीं थी। एक वन क्षेत्र से दूर–दराज तक के वन क्षेत्रों में संपर्क मार्गों का उपयोग कर बाघ आवाजाही करते रहते थे लेकिन आजादी के बाद के विकास में सड़कों, रेलमार्गों, नहरों, खनन, कारखानों, मानव बस्तियों एवं कृषि क्षेत्रों के विस्तार ने कॉरीडोरों को भारी नुकसान पहुंचाया। किसी समय आपस में जुडे वन क्षेत्र अलग–थलग पड़ते चले गये जिससे बाघों सहित अन्य प्राणियों का विचरण बाधित होता चला गया। समय के साथ बाघ का भोजन आधार समाप्त हो गया। सांभर व जंगली सुअर की संख्या में भारी कमी आयी। चिंकारा एवं चौसिंगा भी तेजी से घटने लगे। काला हिरण दक्षिणी राजस्थान से बिल्कुल समाप्त हो गया और अंततः दक्षिणी राजस्थान से बाघ का विलुप्तिकरण भी हो गया।

5. निष्कर्ष

तंवर(1956) एवं शर्मा(2007, 2014) के अध्ययन से यह स्पष्ट है कि सन् 1956 तक दक्षिणी राजस्थान में बाघ बडे भू–भाग पर वितरित थे। अच्छी संख्या में उपलब्धि के कारण ही उनके शिकार–आखेट प्रक्रम भी होते रहते थे। रावली–टॉड़गढ़ के जंगलों में भी बाघ के 1955 तक परमिट शिकार के प्रमाणित दस्तावेज उपलब्ध है(शर्मा 2015 अ)। 1955 तक बाघ के परमिट शिकार के प्रकरण इंगित करते हैं कि बाघों की इतनी संख्या विद्यमान थी कि वैध ढंग से लाइसेन्स लेकर उनका शिकार किया जा सकता था। ''राजस्थान वाइल्ड़ एनीमल्स एवं बर्ड्स प्रोटेक्शन एक्ट 1951'' के आगमन पर इस अधिनियम अन्तर्गत रणथम्भौर, सरिस्का, दरा, जयसमन्द एवं वनविहार को नवम्बर 7, 1955 को प्रथम बार अभयारण्य घोषित किया गया(मोहनराज एवं शर्मा, 2013)। ये पाँचों अभयारण्य बाघों के लिए प्रसिद्ध थे। इन पाँचों में तत्समय बाघ विद्यमान थे लेकिन कालान्तर में दरा, जयसमन्द एवं वन विहार में यह बड़ी बिल्ली समाप्त हो गयी तथा केवल सरिस्का एंव रणथम्भौर में ही बाघ बचे। बीच में एक दौर आया जब सरिस्का में भी बाघ समाप्तप्राय हो गये एवं वहाँ रणथम्भौर से लाकर उन्हें पुनः बसाया गया। दक्षिणी राजस्थान में 1950 से 1960 के बीच बाघों की स्थिति संतोषजनक थी। लेकिन बाद में वन विनाश, खनन, बढ़ती आबादी, कृषि विस्तार, वनों का खण्ड़ीकरण, कॉरीडोर विनाश, भोजन आधार विनाश आदि कारकों ने बाघ के लिए स्थितियाँ प्रतिकूल कर दी है एवं उनकी संख्या तेजी से घटते हुए 1970 से 1980 के बीच बाघ दक्षिणी राजस्थान से विलुप्त हो गये।

आभार– लेखक वन विभाग के सभी कर्मचारियों–अधिकारियों एवं उन सभी के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट करते हैं जिन्होंने प्रस्तुत अध्ययन में सहयोग प्रदान किया।

सन्दर्भ

1. मेनन, वी0(2014) इड़ियन मैमल्स–ए फील्ड़ गाइड़, हचेट बुक पब्लिशिंग इण्ड़िया प्रा0 लि0, गुड़गाँव।
2. मोहनराज, टी0 एवं शर्मा, सतीश कुमार(2013) जयसमन्द वाइल्ड़ लाइफ सेंक्चुरी मेनेजमेन्ट प्लान 2013–14 से 2022–23, वन विभाग, राजस्थान।
3. प्रेटर, एस0 एच0(1980) द बुक ऑफ इण्ड़ियन मैमल्स, बॉम्बे नेचुरल हिस्ट्री सोसायटी।
4. तँवर, तुलसीनाथ एवं सिंह धायभाई(1956). शिकारी और शिकार, प्रकाशक धायभाई तुलसीनाथ सिंह तंवर, जगदीश चौक, उदयपुर, मेवाड़), मु0पृ0 1–363।
5. रिचर्डसन, डी0(1992) बिग कैट्स, व्हिटर बुक्स, लन्दन।
6. श्यामलदास(1886) वीर विनोद–मेवाड़ का इतिहास, प्रथम भाग।
7. शर्मा, एस0 के0 (2007) स्टड़ी ऑफ बायोडायवर्सिटी एण्ड़ एथनोबायोलोजी ऑफ फुलवारी वाइल्ड़लाइफ सेंक्चुरी, उदयपुर, राजस्थान, पी–एच0 डी0 थीसिस, मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर, राजस्थान।
8. शर्मा, सतीश कुमार(2014) दक्षिणी राजस्थान के ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में बाघ से संबधित कुछ तथ्य, अनुसंधान(विज्ञान शोध पत्रिका) खण्ड–2, अंक–1, मु0पृ0 9–17।
9. शर्मा, सतीश कुमार(2015 अ) टॉडगढ़–रावली वन्यजीव अभयारण्यः गत शताब्दी में बाघों की उपस्थिति से सबंधित कुछ ऐतिहासिक तथ्य, अनुसंधान(विज्ञान शोध पत्रिका, खण्ड–3, अंक–1, मु0पृ0 1–5।
10, शर्मा, सतीश कुमार(2015 ब) राजस्थान के बूंदी जिले में वन्य प्राणियों की 1950 से 1980 तक की अवधि का एक अध्ययन, अनुसंधान(विज्ञान शोध पत्रिका), खण्ड–59, अंक–1, मु0पृ0 39–44।